AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

वैश्वीकरण के दौर में भारतीय संस्कृति में परिवर्तन (कोरबा जिले के बालको नगर के विशेष संदर्भ में)

ORIGINAL ARTICLE

Author
डॉ. विमला सिंह,
सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र),
श्री अग्रसेन कन्या महाविद्यालय,
कोरबा, छत्तीसगढ़, भारत

शोध सार

आज सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, बौद्धिक स्तर में परिवर्तन से एक ओर जहाँ व्यक्तिवादी मूल्यों को बढ़ावा मिला वही दूसरी ओर समानता, लोकतंत्र व लौकिकवाद तथा वैज्ञानिकता से संबंधित मूल्यों को भी बढ़ावा मिला। कानून के समक्ष समानता का सामाजिक मूल्य वैश्वीकरण की ही देन है। शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार सबको है, धर्म के आधार पर या जाति के नाम पर छुआछूत अनूचित है। स्त्रियों को पुरूषों के बराबर हक प्राप्त है। भारतीय समाज अथवा सभ्यता का इतिहास काफी प्राचीन है। समय–समय पर भारतीय समाज में अनेक उतार–चढ़ाव आये, लेकिन फिर भी इसका मौलिक स्वरूप सदा जीवित रहा।

मुख्य शब्द

बौद्धिक स्तर, व्यक्तिवादी मूल्य, लौकिकवाद, छुआछूत।

जिस देश काल में आज हम सब जी रहे हैं वह कई दृष्टियों से अनोखा है। बीते हुए कल और आने वाले कल को जोड़ने वाला आज दोनों से पूरी तरह जुड़ नही पा रहा है, कम से कम सामाजिक– सांस्कृतिक आकांक्षा और अनुभव के स्तर पर भारतीय समाज एक बंद सामाजिक व्यवस्था से खुले सामाजिक व्यवस्था की ओर आगे बढ़ रहा है। यह एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, दुनिया का हर समाज बंद व्यवस्था से खुली व्यवस्था की ओर बढ़ा है। कोई भी जातिगत समाज पूंजीवादी एवं प्रजातान्त्रिक व्यवस्था पर आधारित होकर भी बंद नहीं रह सकता है क्योंकि जाति एवं प्रजातंत्र दोनों एक–दूसरे के विरोधी मूल्यों पर आधारित हैं। वैश्वीकरण से सामाजिक, सांस्कृतिक प्रबन्धों में भौगोलिक बंधन घट जाते है और जिसमें लोग अधिकाधिक जागरूक हो जाते है। सांस्कृतिक विकास मानव के उन्नतशील उदात्त जीवन का रूपायन है और संस्कृति उसके चिंतन, मनन, संवेदना का रूप है। सभ्यता एवं संस्कृति के समन्वय से पूर्ण मानव का विकास होता है। जीवन के भौतिक पक्ष का उन्नयन सभ्यता का अंग है। संस्कृति आभ्यांतरिक जीवन मूल्यों को व्यक्त करती है। जीवन के साधनों का जब मनुष्य विकास करता है तब उसे हम सभ्य कहते हैं।

अतः संस्कृति आत्मा से जुड़कर आत्मिक विकास, उत्थान, उत्कर्ष द्वारा आत्मदर्शन को प्रेरित करती है इसलिए सांस्कृतिक विकास आत्मिक विकास की यात्रा है। सांस्कृतिक परिवर्तन का तात्पर्य जीवन के सभी पक्षों में परिवर्तन से है। इसके अंतर्गत धर्म, ज्ञान, कला, विश्वास, प्रथा, कानून, जीवन के मूल्यों, दर्शन, साहित्य, वास्तुकला, आदतें

आदि सभी क्षेत्रों में परिवर्तन सम्मिलित हैं।

समाज में व्यक्ति को अपनी परम्पराओं, प्रथाओं, मान्यताओं के अनुसार काम करना पड़ता है और दूसरी तरफ नये तरीकों की समस्या रहती है। इस प्रकार व्यक्ति समाज का सदस्य होने के नाते जितने भी भौतिक–अभौतिक व्यवहारों को सीखता है वे सभी संस्कृति के अंग है। हम जितने भी विचारों, विश्वासों, धार्मिक नियमों, प्रथाओं, परम्पराओं और जनरीतियों में जीवन व्यतीत करते है, वे सब अभौतिक संस्कृति हैं।

वीरस्टीट ने कहा है ''कि अभौतिक संस्कृति में सभी विश्वासों, पौराणिक कथाओं, साहित्य, लोकोक्तियों, प्रथाओं,[1]

भारत ही एकमात्र वह देश है जहां परम्परायें प्राचीन काल से ही अपने पूर्ण प्रभाव के साथ विद्यमान रही है तथा यही वह देश है जहां विकास की प्रक्रिया तीव्र गति से चल रही है। भारत स्वयं को एक विकसित राष्ट्र कहलाने के लिए आतुर है। भारत में विकास कार्यो को गति तो वैसे स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् ही मिली। भारत में निरंतर विकास होता रहा, आज भी हो रहा है। परम्परायें पहले भी विद्यमान थी, आज भी हैं केवल इनके स्वरूप में परिवर्तन आया है अर्थात् परम्परा ने विकास की नीतियों एवं आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयं को ढाल लिया है। लोगों ने भी अपनी वर्तमान आवश्यकताओं को समझा है इस कारण वे अधिक व्यवहारिक एवं अधिक तार्किक हो गये हैं।

लिंटन ने लिखा है ''संस्कृति विचारों, आदतों, भावनात्मक प्रतिक्रियाओं का संगठन है जो एक समाज के सदस्यों द्वारा स्वीकार किया गया है।''[2]

हम कह सकते है कि विकास की दौड़ में परम्परा का प्रभाव कम हो रहा है तथा परम्परा के स्वरूप में परिवर्तन आया है। परम्परा का निर्माण स्वयं मनुष्य करता है तथा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु मनुष्य ने अपनी परम्पराओं को परिवर्तित कर लिया है, भारतीय समाज भी इससे अछूता नहीं रहा है। विकास की दौड़ मे भारतीय परंम्पराओं पर वैश्वीकरण का प्रभाव पड़ रहा है।

पिछले कुछ दशकों में औद्योगीकरण, नगरीकरण, दूरदर्शन, कम्प्यूटर, इन्टरनेट, मोबाईल फोन आदि का जाल सा फैल गया है। यह देखने में आया है कि जिन–जिन देशों में वैश्वीकरण संस्कृति पहुंच गयी है वहां–वहां स्थानीय संस्कृति ने इस नई संस्कृति के कुछ तत्वों को अपनी आवश्यकतानुसार ग्रहण कर लिया है, जैसे भारत के नगरीय परिवेश में अंग्रेजी भाषा का आम प्रयोग, खानपान की पश्चिमी विधि, क्लबों और होटलों आदि का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। अब लोगों के व्यवहारों के प्रतिमान भी बदल रहे हैं।

अध्ययन विश्लेषण

प्रस्तुत शोध पत्र कोरबा जिले (छत्तीसगढ) के बालको नगर में निवासरत शिक्षित, अशिक्षित, नौकरी पेशा, गैर नौकरी पेशा महिलाओं व पुरूषों को अध्ययन मे लिया गया है। अध्ययन के लिए 50 उत्तरदाताओं का चुनाव उद्देश्य पूर्ण निर्देशन के द्वारा किया गया है। वैश्वीकरण का परिवार पर प्रभाव, परिवार पर पड़ने वाले प्रभाव, धर्म के नियमों का पालन करना, विवाह के बदलते स्वरूप, नातेदारी में परिवर्तन, जातिप्रथा, सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन आदि का सर्वेक्षण कर प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण किया गया है।

परिवार

परम्परागत संयुक्त परिवारों में परम्परागत संस्कृति को बनाये रखा जाता था एवं इन परिवारों में सामाजिक और सांस्कृतिक कार्य, धर्म व प्रथाओं से नियंत्रित होते थे, लेकिन वैश्वीकरण का प्रभाव भारतीयों पर इस कदर पड़ा कि धीरे धीरे उनकी मानसिकता ही परिवर्तित होने लगी। व्यक्ति अत्याधुनिक बनने की होड़ में एक–दूसरे को परास्त करने की प्रतिस्पर्धा भावना ने सुख–सुविधाओं एवं भोग विलास के साधनों को जुटाने में लीन हो गये तथा अपनों से दूर उसका जीवन एकांकी हो गया।

तालिका क्र. 1: वैश्वीकरण का परिवार पर प्रभाव

क्र.	प्रभाव	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	44	88
2	नही	06	12
	कुल योग	50	100

(स्त्रोतः प्राथमिक समंक)

अतः तालिका से स्पष्ट है कि 88 प्रतिशत लोग मानते है कि परिवार पर वैश्वीकरण का प्रभाव पड़ता है तथा परिवार की संरचना में बहुत अधिक परिवर्तन आ गया है, जबकि 12 प्रतिशत लोग नहीं मानते है कि परिवार में परिवर्तन आया है, ये परिवार आज भी पहले जैसे जीवन यापन कर रहे हैं। यदि हाँ तो किस प्रकार काः –

तालिका क्र. 2: परिवार पर पड़ने वाले प्रभाव

क्र.	प्रभाव	आवृत्ति	प्रतिशत
1	परिवार के आकार में	13	26
2	नियंत्रण मे कमी	08	16
3	तर्क की प्रधानता	17	34
4	व्यक्तिगत स्वतंत्रता में वृद्धि	12	24
	कुल योग	50	100

(स्त्रोतः प्राथमिक समंक)

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 34 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार रूढ़ियों के बदले तर्क की प्रधानता के कारण परिवार में परिवर्तन दिखाई दे रहा है, 24 प्रतिशत व्यक्तिगत स्वतंत्रता में वृद्धि, 26 प्रतिशत परिवार के आकार में, 16 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार अधिकांश परिवार में नियंत्रण की कमी आई है क्योंकि आज लोग एकांकी परिवार में जीवन यापन करने से नियंत्रण में रहना नहीं चाहते है।

धर्म

धार्मिक रीति–रिवाज एवं पाखण्डों ने व्यक्ति के जीवन को जकड़ रखा था, धार्मिकता के नाम पर अनेक कुसंस्कारों एवं कुरीतियों ने व्यक्ति का स्वतन्त्र होकर जीना दूभर कर दिया था। कानून और न्यायालय नियन्त्रण के औपचारिक साधन है जिनकी अवहेलना करना व्यक्ति की आदत बन जाती है, लेकिन धार्मिक नियमों के पीछे ईश्वरीय दण्ड का भय होने के कारण व्यक्ति इनकी अवहेलना नही करता, परन्तु आज धार्मिक कट्टरता में कमी आयी है, क्योंकि नवीन परिस्थितियों में धार्मिक नियमों का पहले जितना कठोरता से पालन करना अब सम्भव नही है।

तालिका क्र. 3: धर्म के नियमों का पालन करना

क्र.	पालन करना	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पूर्ण रूप से	06	12
2	सामान्य रूप से	21	42
3	आंशिक रूप से	23	46
	कुल योग	50	100

(स्त्रोतः प्राथमिक समंक)

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 46 प्रतिशत लोगों द्वारा धर्म के नियमों का पालन आंशिक रूप से करते है क्योंकि ये अपने कामों में ज्यादा व्यस्त रहते है। 42 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा सामान्य रूप से 12 प्रतिशत पूर्ण रूप से धर्म के नियमों का पालन करते है।

विवाह

आज धर्म का महत्व दिन–प्रतिदिन घटता ही जा रहा है और आज विवाह को धार्मिक कर्तव्य के रूप में प्राप्त करने की प्रवृत्ति शायद ही खत्म होती जा रही है। बाल–विवाह के दुश्परिणामों के संदर्भ में हिन्दूओं में जागरूकता तीव्रता से बढ़ती जा रही है, इसलिए बाल–विवाह के पक्ष में भी लोगों का झुकाव कम हो रहा है क्योंकि आज लड़के पढ़ी–लिखी पत्नी चाहते हैं और अपने पैरों पर खड़े न होने तक विवाह का विरोध करते है, क्योंकि आज लड़कियों में भी शिक्षा ग्रहण करके अपने व्यक्तित्व को विकसित करने और अपने अधिकारों को समझने की प्रवृत्ति बढ़ रही है।

आज यह आभास होता जा रहा है कि देर–विवाह में दम्पत्तियों के स्वास्थ्य की रक्षा, स्वस्थ सन्तान, लड़को व लड़कियों के व्यक्तित्व के विकास में सुविधा और योग्य जीवन–साथी के चयन में सहायता मिलती है।

तालिका क्र. 4: विवाह के बदलते स्वरूप

क्र.	बदलते स्वरूप	आवृत्ति	प्रतिशत
1	विलम्ब विवाह	08	16
2	समझौते के रूप में	15	30
3	जिम्मेदारी का अभाव	17	34
4	तलाक की बढ़ती संख्या	10	20
	कुल योग –	50	100

(स्त्रोतः प्राथमिक समंक)

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 34 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार आज विवाह के बदलते स्वरूप का कारण जिम्मेदारी का अभाव मानते है क्योंकि आज युवा पीढ़ी विवाह करके अपने को बंधा हुआ महसुस करने लगे है। 30 प्रतिशत समझौते के रूप में, 20 प्रतिशत तलाक के बढ़ती संख्या, 16 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अधिक उम्र में विवाह करने के कारण विवाह के स्वरूप में परिवर्तन महसूस करते है। आज युवा पीढ़ी शिक्षा प्राप्त कर नौकरी मिलने के बाद ही विवाह करना चाहते है।

नातेदारी

वैश्वीकरण के परिणाम स्वरूप आज महिलाएँ पुरूषों के साथ कंधा से कंधा मिलाकर काम कर रही है। जाहिर है कि इसका असर नातो–रिश्तों पर पड़ रहा है, घर–बाहर में मानी जानी वाली सत्ता के स्वरूप पर पड़ रहा है। आमतौर पर लोग कहते है कि जमाना बदल गया है, अब नाते–रिश्तें रहे ही नही। इस बात का आशय यह नही है कि नाते–रिश्ते रहे ही नही, इसका अर्थ है कि नातों–रिश्तों का स्वरूप बदल गया है।

तालिका क्र. 5: नातेदारी में परिवर्तन

क्र.	परिवर्तन के कारण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	घनिष्टता में कमी	12	24
2	स्वार्थ की भावना	09	18
3	दिखावापन करना	13	26
4	समय का अभाव	16	32
	कुल योग –	50	100

(स्त्रोतः प्राथमिक समंक)

अतः तालिका से स्पष्ट है कि 32 प्रतिशत उत्तरदाता नातेदारी परिवर्तन के कारण समय का अभाव बताये है, क्योंकि ये अधिक व्यस्त होने के कारण समय नही निकाल पाते है। 26 प्रतिशत दिखावापन करना, 24 प्रतिशत घनिष्टता में कमी, 18 प्रतिशत स्वार्थ की भावना आने से, नातेदारी के स्वरूप में परिवर्तन मानते है।

जाति प्रथा

जाति प्रथा के अन्तर्गत सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा राजनीतिक क्षेत्र में ब्राम्हणों की विशेष महत्व एवं प्रभुत्व रहा है। किन्तु वर्तमान में व्यक्तिगत गुणों एवं धन का महत्व बढ़ जाने के कारण निम्न जातियों के व्यक्ति भी शिक्षा ग्रहण कर धन संचय कर एवं चुनाव में विजय प्राप्त कर अपनी सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति को ऊंचा उठाने से सफल हुए है तथा होटलों एवं क्लब में सभी जातियों के व्यक्ति साथ–साथ खाने–पीने लगे है। जाति के विवाह संबंधी नियंत्रण शिथिल हुए है, अब अर्न्तजातीय विवाह, विलम्ब विवाह, विवाह–विच्छेद एवं विधवा पुनर्विवाह होने लगे है।

क्या जाति–प्रथा के बन्धनों में परिवर्तन आया है? इस संबंध में जब उत्तरदाताओं से प्रश्न पुछे गये तो सभी 50 उत्तरदाता इस बात से सहमत है कि आज जाति–र्प्रथा के कठोर नियंत्रण में कमी आई है। अब लोगों के लिए जाति का ज्यादा महत्व नही रहा, अब लोग किसी से उसकी जाति नहीं वरन् शिक्षा और योग्यता के विषय में पूछते है।

सामाजिक दृष्टिकोण मे परिवर्तन

परिवर्तन प्रकृति का नियम है समाज इसी प्रकृति का अंग है, अतः सामाजिक परिवर्तन प्राकृतिक अथवा स्वाभाविक है। परिवर्तन की प्रक्रिया कभी रूकती नहीं, हम किसी भी ऐसे समाज की कल्पना नही कर सकते जो पूर्ण स्थिर हो। आज जातिगत भेदभाव, सती–प्रथा, पर्दा–प्रथा, बाल–विवाह मूल्यों में, विधवाओं पर अत्याचार, अस्पृश्यता, स्त्रियों की स्थिति आदि पर आए परिवर्तन किसी न किसी रूप में वैश्वीकरण से प्रभावित हुए है।

उपसंहार

वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप भारत में परम्परा और आधुनिकता के बीच अन्तक्रिया के संबंध में यह कहा जा सकता है कि ये दोनों परस्पर विरोधी नही है। एक सन्तुलन व समन्वयवादी दृष्टिकोण ही भारतीय समाज के विकास में सहायक हो सकता हैं।

महायोगी महर्षि अरविन्द ने उचित ही कहा था ''कि हमें अपने भूतकाल पर गर्व होना चाहिए, वर्तमान पर पीड़ा होनी चाहिए और भविष्य के लिए उन्माद होना चाहिए तभी हम भारतीय प्रगति के शिखर पर पहुंच सकते है।

1. परिवार पर वैश्वीकरण का प्रभाव पड़ रहा है। आज परिवार की संरचना में परिवर्तन आ गया है, संयुक्त परिवार से एकांकी परिवारों की संख्या बढ़ रही है। आज लोग नियंत्रण में रहना नहीं चाहते हैं।
2. आज धार्मिक कट्टरता में कमी आयी है। आज लोग अपने कार्य अर्थात् कर्म को महत्व दे रहे हैं, इनका मानना है कि कर्म सबसे बड़ी पूजा है।
3. वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप आज की युवा पीढ़ी विवाह करके अपने आप को बंधा हुआ महसूस करती है तथा इनमें जिम्मेदारियों का अभाव पाया जाता है एवं विलम्ब विवाह किया जा रहा है।
4. आज महिलाएँ पुरूषों के साथ कंधा से कंधा मिलाकर काम कर रही हैं। समय के अभाव के कारण नातेदारी में भी परिवर्तन आ गया है।
5. वैश्वीकरण के परिणाम स्वरूप अब जाति का ज्यादा महत्व नहीं रहा, अब लोग किसी से उसकी जाति नहीं वरन् शिक्षा और योग्यता को महत्व देते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. पाण्डेय तेजस्कर, पाण्डेय ओजस्कर, *समाजकार्य,* भारत बुक सेन्टर लखनऊ पृ. – 1180.
2. मदन जी.आर., *परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र,* विवेक प्रकाशन पृ. – 05, 333, 2011.
3. जोशी ओम प्रकाश, *ग्रामीण एवं नगरीय समाजशास्त्र,* रिसर्च पब्लिकेशन्स जयपुर, पृ.– 97, 2011.

4. लवानिया एम.एम., जैन शशी के., *भारतीय सामाजिक संस्थाएँ,* रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर, पृ.–01, 146,2011.
5. चतुर्वेदी सुषमा, *हिन्दू परिवारों के परिवर्तित प्रतिमान,* ज्योति प्रकाशन जयपुर, पृ. – 110, 2001.
6. लवानिया एम.एम., जैन के. शशी, *धर्म का समाजशास्त्र,* रिसर्च पब्लिकेशन्स जयपर, पृ. – 209, 2012.
7. जैन शोभित, *भारत में परिवार, विवाह और नातेदारी,* रावत पब्लिकेशन्स जयपुर, पृ. – 271, 272, 2010.
8. महाजन संजीव, *समाजशास्त्रीय अवधारणाएं,* अर्जून पब्लिशिंग हाउस, पृ. – 73, 2012.
9. सिंह शषि भूषण, *भारतीय समाज की रूपरेखा,* अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, पृ. – 27, 207, 2012.

––==00==––